संगोष्ठी आयोजक

यह संगोष्ठी सेंटर फॉर सिविलाइजेशनल स्टडीज, इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय कला केंद्र (आईजीएनसीए), राँची तथा राँची विश्वविद्यालय द्वारा संयुक्त रूप से आयोजित की जाएगी।

सेंटर फॉर सिविलाइजेशनल स्टडीज

सेंटर फॉर सिविलाइजेशनल स्टडीज यानी सभ्यता अध्ययन केंद्र एक दिल्ली स्थित शोध संस्थान है। यह एक पंजीकृत पब्लिक चैरिटेबल ट्रस्ट है। केंद्र द्वारा दिल्ली, राजस्थान, हिमाचल प्रदेश, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, बिहार और झारखंड में अध्ययन केंद्र चलाए जा रहे हैं। केंद्र ने गत छह वर्षों में पचास से अधिक व्याख्यानों, गोष्ठियों और कार्यशालाओं का आयोजन किया है। केंद्र द्वारा सभ्यता संवाद नामक एक त्रैमासिक शोध पत्रिका का प्रकाशन किया जा रहा है। साथ ही केंद्र ने पाँच पुस्तकें भी प्रकाशित की हैं तथा कई अन्य पुस्तकें प्रकाशनाधीन हैं।

आईजीएनसीए

आईजीएनसीए के उद्देश्यों और ध्येयों में एक उद्देश्य है– "विविध सामाजिक स्तरों, समुदायों और क्षेत्रों के बीच पारस्परिक संवाद के जटिल जाल में रचनात्मक और गतिशील कारकों पर प्रकाश डालना।" प्रस्तावित संगोष्ठी के माध्यम से झारखंड की जनजातियों को पारस्परिक संवाद का अवसर मिलेगा तथा इन जनजातियों की विशिष्टताओं को अन्य समुदायों के समक्ष लाने का भी अवसर प्राप्त होगा। आईजीएनसीए का आदिवासी और लोक कला प्रभाग जनजातीय समुदाय के लिए ऐसे प्रयास करता रहा है और साथ ही इस उद्देश्य के लिए राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं के साथ नेटवर्क को बढ़ावा देने के लिए भी कार्य करता रहा है। अत: यह संगोष्ठी आईजीएनसीए के उद्देश्यों को पूरा करने में सहायक सिद्ध होगी। इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केंद्र कलाओं के क्षेत्र में शोध और शैक्षिक अनुसंधान तथा प्रसार का केंद्र है। इसकी स्थापना श्रीमती इंदिरा गाँधी जी की स्मृति में भारत सरकार के संस्कृति मंत्रालय के अधीन एक स्वायत्त निकाय के रूप में सन 1985 में की गई वर्ष 2017 में इसके राँची केंद्र की स्थापना तत्कालीन राज्यपाल तथा वर्तमान राष्ट्रपति श्रीमती द्रौपदी मुरमु की उपस्थिति में की गई थी। राँची केंद्र का उद्देश्य देश की जनजातियों की समृद्ध संस्कृति की जानकारी को संरक्षित, संवर्धित तथा प्रसारित करना है।

राँची विश्वविद्यालय

राँची विश्वविद्यालय झारखंड और भारत का एक प्रमुख शिक्षण संस्थान है। इस विश्वविद्यालय का मुख्य परिसर राँची में है और सिंहभूम तथा राँची जिले में इसके 35 से ज्यादा अंगीभूत कालेज हैं। रांची विश्वविद्यालय की स्थापना 10 जुलाई 1960 को की गयी थी। जनजातीय संस्कृति को बढ़ावा देने के लिए राँची विश्वविद्यालय प्रारंभ से प्रतिबद्ध रहा है और इस हेतु के लिए इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय कलाकेंद्र की राँची शाखा के साथ उसका एक समझौता (एमओयू) भी हुआ है।

संगोष्ठी के निमित्त शोध पत्र आमंत्रित हैं।

शोध पत्र 10 नवम्बर, 2022 तक ccsjharkhand01@gmail.com पर भेजे जा सकते हैं।

- शोध पत्र https://forms.gle/EPYsH8ZuPWiomBKp7 पर अपलोड किए जा सकते हैं
- शोध पत्र यूनीकोड फॉन्ट में टाइप कर एम एस वर्ड फाइल में भेजें, साथ में पीडीएफ फाइल भी भेजें
- सन्दर्भों के लिए एपीए VI शैली का प्रयोग करें
- शोध पत्रों के साथ सार-संक्षेप, लेखक परिचय, पत्राचार पता, संपर्क इत्यादि अवश्य भेजें
- शब्द सीमा : 2500-4500

शोध पत्रों के लिए केन्द्रीय विषय : झारखंड की जनजातियाँ व उनकी देवलोक सम्बन्धी धारणाएं

(प्रमुख जनजातियों की सूची निम्नलिखित है:)

1. मुण्डा	12. बथूड़ी	23. खोंड
2. संताल (संथाल, सौतार)	13. बेदिया	24. किसान
3. उरांव	14. बिंझिया	25. कोरा
4. खड़िया	15. बिरहोर	26. कोरबा
5. गोण्ड	16. बिरजिया	27. लोहरा
6. कोल	17. चेरो	28. महली
7. कनबार	18. चिक बड़ाईक	29. माल पहाड़िया
8. सावर	19. गोराइत	30. पहाड़िया
9. असुर	20. हो	31. सौरिया पहाड़िया
10. बैगा	21. करमाली	32. भूमिज
11. बंजारा	22. खरवार	

उपरोक्त में से किसी एक या अधिक जनजातियों से संबंधित निम्नलिखित विषयों पर शोध आलेख लिखे जा सकते हैं:

1. उत्पत्ति तथा गोत्र विधान	6. दैनन्दिन जीवन में किए जाने वाले कर्मकांड
2. देवलोक तथा देवतासंबंधी अवधारणाएं	7. शिक्षा तथा न्याय की उनकी आंतरिक व्यवस्थाएं
3. सृष्टिसंबंधी अवधारणाएं	8. पारंपरिक सामाजिक तथा राजनीतिक संरचनाएं
4. धार्मिक कर्मकांड तथा परंपराएं	9. अस्पृश्य तथा अशौच विधान
5. जन्मोत्सव, विवाह तथा मृत्यु के आदि अवसरों पर किए जाने वाले संस्कार	

सभ्यता अध्ययन केंद्र
Center for Civilisational Studies
बी14, गली. नं. 13, वज़ीराबाद गांव, दिल्ली-110084, दूरभाष : 9899588033,
वेबसाइट : www.civilisationalstudies.org, ईमेल : civilisationalstudies@gmail.com
फेसबुक : https://www.facebook.com/civilisationalstudies
यूट्यूब : https://www.youtube.com/c/CivilisationalStudies

सभ्यता अध्ययन केंद्र | इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केंद्र | रांची विश्वविद्यालय, रांची

दो दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी

जनजातीय देव-लोक और धार्मिक परंपराएँ

स्थान : आर्यभट्ट सभागार, रांची विश्वविद्यालय
दिनांक : 19-20 नवम्बर 2022

संपर्क

धीरेन्द्र कुमार (मो. 9031659660)
मनोज आर्य (मो. 9934276700)
रवि शंकर (मो. 9899588033)
निदेशक, सभ्यता अध्ययन केंद्र
कुमार संजय झा (मो. 8368684676)
क्षेत्रीय निदेशक, आईजीएनसीए, रांची

पंजीकरण लिंक: https://forms.gle/EPYsH8ZuPWiomBKp7

प्रस्तावना

देवलोक की अवधारणा पूरे मानव समाज में पाई जाती है। ये अवधारणाएं अत्यंत प्राचीन हैं। देश के जनजातीय समाज की भी देवलोक की अपनी अवधारणाएं हैं। इन अवधारणाओं के अनुसार ही उनकी धार्मिक परंपरा, अनुष्ठान तथा कर्मकांड होते हैं। इन अवधारणाओं के आधार पर ही वे अपना जीवन जीते हैं और जीवन के विभिन्न अवसरों पर आवश्यक कर्मकांडों का पालन करते हैं। व्यक्ति के जन्म तथा मृत्यु, सृष्टि की रचना तथा स्वर्ग, नर्क की अवधारणा और देवताओं का अस्तित्व तथा उनकी हमारे जीवन में भूमिका आदि सभी विषयों पर सभी जनजातीयों में विशिष्ट अवधारणाएं और परंपराएं हैं। इनको जानना-समझना ही इस संगोष्ठी का उद्देश्य है। इन अवधारणाओं तथा परंपराओं को इस संगोष्ठी के माध्यम से लिपिबद्ध भी किया जाएगा। उल्लेखनीय है कि जनजातीय समाज सहित देश के सभी समुदायों में बहुत सारी बातें साझा मिलती हैं। इनमें से एक महत्त्वपूर्ण बात है देवलोक और उसकी अवधारणाएं तथा उस पर आधारित धार्मिक कर्मकांड। यह संगोष्ठी झारखंड के सभी जनजातियों की देवलोक संबंधी अवधारणाओं तथा उन पर आधारित कर्मकांडों तथा उनसे जुड़े गीत-संगीत आदि कला पक्ष के अध्ययन तथा उस पर विमर्श करने के लिए आयोजित की जा रही है। चूँकि झारखंड में 32 जनजातियां रहती हैं, इसलिए सभी जनजातियों की मान्यताओं पर विचार करने के लिए दो दिन की गोष्ठी आवश्यक है।

संगोष्ठी की आवश्यकता

जनजातीय समाज को यूरोपीय लोगों ने और आधुनिक शिक्षा में शिक्षित लोगों ने एक बहिष्कृत समाज के रूप में चित्रित किया हुआ है। वर्जिनियस जाजा यूनिसेफ के शोधपत्र के प्रारंभ में ही लिखते हैं, "भारत की जनजातियों के बारे में यह अवधारणा बनाई गई कि इनका एक प्रमुख लक्षण शेष भारतीय समाज से भौगोलिक तथा सामाजिक रूप से अलग होना है। इसका तात्पर्य यह है कि जनजातियों के बारे में अवधारणा शेष भारतीय समाज की तुलना में बनाई गई, न कि उनके अपने सामाजिक रचना के स्तरों के आधार पर।" जाजा एक विदेशी लेखक को उद्धरित करते हैं कि वे जनजातियों को समाज तथा सिविलाइजेशन बाहर रहे हैं। यहाँ सिविलाइजेशन शब्द का अनुवाद इसलिए नहीं किया गया है, क्योंकि यूरोप में सिविलाइजेशन का अर्थ केवल सांस्थानिकृत (इन्स्टीच्युशनलाइज्ड) समाज होता है, नैतिकताआधारित समाज नहीं। इसलिए यूरोपीय विशेषकर अंग्रेज प्रशासक भारत के जनजातीय समाज की स्थिति को समझ नहीं पाए और उन्होंने उसकी एक विशेष पहचान बनाने का प्रयास किया। इसका एक कारण जाजा यह बताते हैं कि अंग्रेजों के औपनिवेशिक शासन में जनजातीय समाज का समावेश युद्ध, जीत और अधिग्रहण के रूप में हुआ था।

उल्लेखनीय है कि इनके लिए ट्राइब या जनजाति शब्द का प्रयोग भी औपनिवेशिक शासनकर्ताओं ने ही किया था। उनका उद्देश्य कास्ट यानी जातियों यानी देश के शेष समाज से इन्हें भिन्न दिखाना था। इससे यह स्पष्ट है कि जनजातीय समाज का वर्गीकरण ही एक्सक्लूसन यानी बहिष्करण के आधार पर हुआ है। यह वर्गीकरण ही इन्हें शेष समाज से पृथक करता है, भौगोलिक या सामाजिक या अन्यान्य स्थितियां नहीं। देखा जाए तो सामाजिक तथा धार्मिक मान्यताएं तथा परंपराएं इन्हें देश के शेष समाज से जोड़ती हैं, परंतु इन्हें उस रूप में कभी देखने का प्रयास नहीं हुआ। ईसाई मिशनरियां तो मतांतरण करने में सुविधा की दृष्टि से ऐसा करना चाहती थीं। जनजातीय परंपराओं का अधिकांश प्रारंभिक अध्ययन ईसाइयों द्वारा ही किए गए।

स्वाधीनता के बाद जो अध्ययन हुए, वे उन ईसाई मिशनरियों के अध्ययनों पर ही आधारित थे और उन अध्ययनों को करने वाले भारत में अंग्रेजों द्वारा स्थापित तथा प्रचलित औपनिवेशिक शिक्षा में ही शिक्षित-दीक्षित थे। भारत की सनातन परंपरा की दृष्टि से ऐसा कोई अध्ययन कभी हुआ ही नहीं। औपनिवेशिक शिक्षा में चूँकि पहले से ही इन्हें अपवर्जित यानी एक्सक्लूडेड मान लिया गया था, इसलिए इनकी परंपराओं को हमेशा भिन्न ही दिखाने का प्रयास किया गया। जनजातीय देवलोक तथा धार्मिक कर्मकांड पर पहले भी काफी काम हुए हैं तथा उन पर बड़ी संख्या में पुस्तकें भी लिखी और प्रकाशित की जा चुकी हैं, परंतु ऐसी सभी पुस्तकें अथवा शोध प्रबंधों में वही भिन्नता देखने वाली औपनिवेशिक दृष्टि शामिल है। वही औपनिवेशिक दृष्टि जो इन जनजातीय समाजों को भारत के समाजों के साथ एकात्म रूप में देखने से इनकार करती है और केवल विभेदों की चर्चा करती है। उदाहरण के लिए अपनी पुस्तक आदि देव की भूमिका में प्रसिद्ध विद्वान डॉ. रामदयाल मुंडा लिखते हैं, "हमारा विशेष संदर्भ है झारखंड और उसका पार्श्व प्रदेश। इसलिए कि भारत के पूरे आदिवासी क्षेत्र – गुजरात से अरुणाचल तक का यह मध्य प्रदेश है। यहीं भारत के धार्मिक आदिवासीपन का अधिकांश सुरक्षित है। इसके पूरब के अधिकांश आदिवासी बौद्ध-ईसाई हो गए हैं, तो पश्चिम के हिंदू-मुसलमान। इसलिए इसी आदिवासी मध्यदेश को पुनर्रचना का आधार बनना होगा।" यह उद्धरण हिंदू-बौद्धों को ईसाई-मुसलमानों के समकक्ष लाकर खड़ा कर देता है। यह उद्धरण हिंदू-बौद्धों को कथित आदिवासियों से भिन्न भी साबित करता है। यह उद्धरण आदिवासी समाज को पूरे भारत से अलग-थलग देखने और स्थापित करने का एक प्रयास है।

आज जनजातीय कहे जाने वाले समाज को आदिवासी तथा जनजातीय संबोधन प्रदान करने के पीछे यही अलगाववादी (एक्सक्लूशनिस्ट) दृष्टि प्रभावी थी। इस दृष्टि में मुंडा समाज मुंडा नहीं, बल्कि आदिवासी हो गया, ऊराँव समाज उराँव नहीं रहा, वह आदिवासी हो गया। गोंड अथवा भील समाज गोंड या भील नहीं रहा, वह आदिवासी या जनजातीय हो गया। कभी इन्हें द्रविड़ कहा गया, तो कभी मूलनिवासी के नाम पर देश के शेष समाज से काटने के प्रयास किए गए। कालांतर में इस अलगाववाद के विरोधियों ने भी यही गलती की। उन्हें वनवासी जैसे किसी अन्य नाम में बांधना चाहा। आज विभिन्न समुदायों को जो नये नाम दिये जा रहे हैं – जैसे किसी को सवर्ण, किसी को पिछड़ा, किसी को अनुसूचित जाति, किसी को अतिपिछड़ा, किसी को दलित आदि संबोधन प्रदान किये जा रहे हैं – तो क्या यह उनके हित के लिए है? वस्तुतः यह केवल चुनावी जीत की तिकड़में मात्र हैं, समाज के विकास के प्रयास नहीं।

जनजातीय समाज भी इस अलगाववादी दृष्टिकोण का शिकार हुआ है। उसे एक नई सामूहिक पहचान में बांधने का प्रयास किया जा रहा है। इससे उनकी अपनी पहचान समाप्त हो रही है। उनकी वह पहचान जो भारत से जुड़ी हुई है, जो भारत की विशाल सनातन परंपरा से जुड़ी हुई है। वह परंपरा जो किसी भी समुदाय को उसकी पहचान के साथ जीने देती है, उस पर कोई नई पहचान नहीं थोपती। इसी परंपरा के साथ भारत के ये सभी समुदाय, जो आज जनजातीय या आदिवासी कहे जा रहे हैं, भी जीते आ रहे थे। वे देश के समस्त समाजों के साथ समरस थे, क्योंकि सभी एक दूसरे को समावेशी (इनक्लूसिव) दृष्टि से ही देखते हैं। वे जीव-जीव में भेद नहीं करते थे।

यह परंपरा अंग्रेजों तथा उनके अनुयायियों के तमाम प्रयासों के बाद भी देश के सभी समुदायों की परंपराओं में आज भी कहीं न कहीं जीवित है। यह संगोष्ठी इन जनजातीय समाजों में व्याप्त उसी समावेशीकरण तथा एकात्म परंपराओं को पहचानने का एक प्रयास है। इससे पूर्व भोपाल, मध्य प्रदेश में जनजातीय देवलोक पर एक त्रिदिवसीय गोष्ठी का आयोजन हो चुका है। साथ ही बिरसा मुंडा विश्वविद्यालय, राजपीपला, गुजरात में भी इस पर एक दोदिवसीय गोष्ठी का आयोजन किया गया था। इन गोष्ठियों में यह स्थापित हुआ कि जनजातीय समाज कोई दूसरे ग्रह का समाज नहीं है, बल्कि वह देश की सनातन धारा का ही एक हिस्सा है। वहाँ पढ़े गए विभिन्न शोध प्रपत्रों में यह स्पष्ट बताया गया था कि जनजातीय समाज की देवलोक की अवधारणाएं कहीं न कहीं वैदिक अवधारणाओं के ही निकट हैं। मध्य भारत की लगभग जनजातीय समाजों में शिव के किसी न किसी रूप की पूजा होती है। इसी प्रकार जन्म से लेकर मृत्यु तक होने वाले कर्मकांडों में भी अद्भुत समानताएं प्राप्त होती हैं। मध्य भारत की एक जनजाति गोंड का अपना साम्राज्य रहा है और गोंड राजा मैथिल ब्राह्मण को आमंत्रित करके मंदिरों का निर्माण करवाते रहे हैं। शक्ति के उपासक होने के कारण ही एक प्रसिद्ध गोंड रानी का नाम दुर्गावती था। कुछ यही निष्कर्ष सभ्यता अध्ययन केंद्र द्वारा अभी चल रहे शोध अध्ययन में भी निकल रहा है।

सभ्यता अध्ययन केंद्र द्वारा राजस्थान तथा झारखंड में जनजातीय संस्कृति पर एक शोध अध्ययन किया जा रहा है, जिसके तहत जनजातीय समाज की सामाजिक तथा धार्मिक परंपराओं का अध्ययन किया जा रहा है। इस अध्ययन में यह स्पष्ट हो रहा है कि सनातन हिंदू समाज की ही भांति जनजातीय समाज में भी गोत्र परंपरा, संस्कारों का परिपालन, सूर्य तथा अन्य प्राकृतिक शक्तियों की उपासना शामिल है। सभ्यता अध्ययन केंद्र वर्तमान में केवल तीन-तीन जनजातियों का ही अध्ययन कर रहा है। इस अध्ययन को शेष सभी जनजातियों तक विस्तृत करने की आवश्यकता है। उपरोक्त दोनों ही गोष्ठियां मुख्यतः मध्य प्रदेश तथा गुजरात एवं राजस्थान की जनजातियों पर केंद्रित थीं। ऐसे में झारखंड की जनजातीय देवलोक परंपरा को समझने के लिए एक पृथक गोष्ठी का आयोजन आवश्यक हो जाता है। झारखंड में कुल 32 जनजातियां रहती हैं। इन सभी 32 जनजातियों में अनेक समानताएं हैं और अनेक विभिन्नताएं भी हैं। इसी प्रकार देश के अन्य समुदायों के साथ भी इन सभी जनजातीय समाजों की अनेक समानताएं और विभिन्नताएं होंगी। वर्तमान में जनजातीय समाज की शेष समाज के साथ विभिन्नताओं पर पर्याप्त चर्चा होती है, परंतु दोनों के बीच की समानताओं पर कोई चर्चा नहीं होती। विभिन्नताओं की चर्चा जहाँ हमारी बहुलतावादी संस्कृति को मजबूत करती है, वहीं उसकी अधिक चर्चा से समाज में अलगाव भी पैदा होता है। इसलिए इन विभिन्नताओं के अध्ययन के साथ सभी समाजों में पाई जाने वाली समानताओं की चर्चा भी आवश्यक होती है। यह संगोष्ठी इस कमी को ही पूरा करने का एक प्रयास है।

संगोष्ठी के संभावित विषय

1. जनजातीय देवलोक की अवधारणा
2. जनजातीय धार्मिकता तथा अनुष्ठान
3. झारखंड की जनजातियों में धार्मिक अंतस्संबंध
4. देवलोक संबंधी गीत, संगीत तथा चित्र आदि जनजातीय कलाएं
5. जनजातीय, वैदिक तथा पौराणिक देवलोक
6. जनजातीय, वैदिक तथा पौराणिक आख्यान

इसके अतिरिक्त विभिन्न जनजातियों की देवलोक संबंधी अवधारणाओं तथा धार्मिक पंरपराओं, गीत-संगीत आदि पर शोधपत्रों का वाचन भी किया जाएगा।